GAP भाषा
A MULTILINGUAL JOURNAL OF RESEARCH
(ISSN – 2582-8770)
Globally peer-reviewed and open access journal.

शांकर वेदान्त एवम् काश्मीर शैव दर्शन में जगत का ख्याल – एक तुलनात्मक अध्ययन

प्रा. तृप्ति एम. गजेरा

मददनीश प्राध्यापिका
तत्वज्ञान विभाग
धर्मेन्द्रसिंहजी आर्ट्स कोलेज, राजकोट
truptigajera31@gmail.com

प्रस्तावना

भारतीय दर्शनो में अद्वैत वेदान्त दर्शन का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। अद्वैत दर्शनो में जगत की व्याख्या प्रमुख समस्या रही है। शांकर वेदान्त में अद्वैत की तार्किक व्याख्या प्रस्तुत की गई है, परंतु ब्रह्म के अद्वैत अपरिणामित्व आदि की रक्षा हेतु शांकर वेदान्त में जगत को मिथ्या बताकर इसका निराकरण किया गया है। काश्मीर शैव दर्शन भी अद्वैतवादी दर्शन है, जिसके अनुसार परमतत्व ही एकमात्र सत्य है। परमतत्व से अलग किसी वस्तु की सता नही। जगत और परमतत्व दोनों सत्य है, तो जगत और परमतत्व का द्वैत स्वीकार करना पडेगा, अथवा जगत को शांकर वेदान्त की तरह मिथ्या स्वीकार करना पडेगा.

शांकर वेदान्त में जगत का ख्याल

शांकर वेदान्त अनुसार प्रपंचात्मक दृश्यमान जगत सापेक्ष रूप में सत् है। जगत का कोई भी पदार्थ निरपेक्ष रूप से सत् नहीं है। वस्तुए प्रतीति मात्र है। इस परिवर्तनशील जगत के आधार में एक निरपेक्ष यथार्थ सत्ता है जिसका अस्तित्व निश्चित और संदिग्ध है। पाश्चात्य विचारक देकार्त जागतिक सभी वस्तुओं पर सन्देह करते हुए एक मात्र उस अनन्त पूर्ण सता जो सन्देह कर्ता के रूप में उभर कर आती है उसके अस्तित्व को दृढता पूर्वक सिध्ध करते है। देकार्त की तरह आचार्य शंकर भी कहते है कि.....जब हम किसी वस्तु का उसे अयथार्थ समज कर निराकरण करते है तो हम ऐसा किसी अन्य यथार्थ सता के सम्बन्ध से करते है.....[१] उदाहरण के लिए शंकर कहते है कि जब हम " रज्जु सर्प " में सर्प का निराकरण करते हैं तो इस अयथार्थ, अपर्मर्थ " सर्प " प्रत्यय के आधार में रज्जु को स्वीकार करते है जो निरपेक्ष रूप से सत् है। आगे शंकर स्वंय कहते है कि ' यथार्थ सत्ता ' जिसे अन्य वस्तुओं के सहयोग की आवश्यकता नहीं होती, अपितु सभी प्रकार की कल्पनाओ के मूल रूप होने से स्वत: सिध्ध हैं।[२]

क्योंकि प्रत्येक कल्पित वस्तुओं का आधार होना चाहिए, स्वप्न में देखे गए पदार्थ भी चेतना पर आधारित होते है। डो. राधाकृष्णन कहते हैं कि " हम एक निरपेक्ष यथार्थ सत्ता की स्थापना करने के लिए विवश है, अन्यथा हमारे ज्ञान तथा अनुभव का पूरा ढांचा ही खण्डित हो जायेगा...[३]

आचार्य शंकर इस निरपेक्ष यथार्थ सत्ता को ब्रह्म रूप में स्वीकार करते है जो मन, बुध्धि, वाणी का अविषय होते हुए भी आध्यात्मिक अन्तॅदृष्टि या अपरोक्षानुभूति का विषय है। यही जीवन का सार्वभौम तथ्य है। इसी को हम इस सान्त जगत के आधार रूप में देख सकते है। शंकर कहते है..... इस जगत में अनेक सामान्य अपने विशेषों सहित है, चेतन और अचेतन रूप है, ये समस्त सामान्य अपनी श्रेणीबध्ध श्रुंखलाओं में एक ही सामान्य में अर्थात् ब्रह्म की बुध्धि के पुन्ज स्वरूप के अन्तर्गत है और इसी रूप में उनका बोध प्राप्त होत है।[४]

शांकर वेदान्त के अनुसार ब्रह्म और जगत एक और अनेक दोंनो ही एक समान रूप से सत्य नहीं है। यदि एक तथा अनेक दोंनो ही यथार्थ होते है तो हम एक ऐसे व्यक्ति के विषय में जिसका दृष्टिकोण सांसारिक कर्मपरक है। इसके अतिरिक्त उस अवस्था में अनेक के ज्ञान से एक का ज्ञान उँचा हो सकता।[५]

शांकर वेदान्त में सत्ता और सम्भूति (प्रतीति) तत्व और आभास मे ज्ञाता और ज्ञेय की भांति तादात्म्य स्वीकार किया गया है। प्रत्यक्षवान वस्तु मिथ्या है, परंतु आत्मा जो प्रत्यक्ष का विषय नहीं अपितु स्वंय प्रत्यक्षकर्ता है, सत्य है। शांकर के अनुसार चेतना का विषय मिथ्या है।[६] सत्य का स्वरूप असंदिग्ध होता है। देशकाल के मुक्त जगत की स्वत: व्याख्या नही हो सकती। अनुभव पर आधारित देशकाल को परमसत्य नही कहा जा सकता। अनुभव कार्य कारण सम्बन्ध एवं देशकाल से मुक्त व्यावहारिक जगत पर ही लागु हो सकता है। त्रिकालाबाधित सता ही सत्य है। व्यावहारिक जगत की सत्ता त्रिकालाबाधित नही। अत: उसे सत्य नहीं कहा जा सकता है। जगत मिथ्या है क्योंकि परमार्थ ज्ञान के बाद इसका बोध हो सकता है। जगत परिवर्तनशील है और जो कुछ परिवर्तनशील है उसे सत् नही कहा जा सकता।[७] जगत न तो सत् है न असत् क्योंकि चरम सत् जगत की कोई वस्तु नही और 'अलोक' का विचार तर्कसंगत नहीं है। जगत का रूप परिवर्तनशील है। अत: जगत न तो सत् है न असत्, बल्कि अनिर्वचनीय है। जगत माया का परिणाम है। माया असत् विलक्षण भावरूप है, अत: उसका कार्य जगत भी सदासद अनिर्वचनीय ही होगा। इस सीमित जगत में सत् का असत् के साथ सम्बन्ध केवल एक दुसे से बाध्य होने का नही है, अपितु दोनों धुओं के समान एक दुसरे से सर्वथा विपरीत दिशा का है। सर्वथा एक दुसरे के प्रतिकूल होते है या सह सम्बन्धी होते है उनमें से कोई भी वास्तविकता प्राप्त नही करता, सिवाय इसके कि एक दूसरे से विरोध के द्वारा। एक यथार्थ दूसरे के अन्दर कितना ही प्रविष्ट क्यों न हो भेद और विरोध सदा विद्यमान रहते है और इस प्रकार जगत की प्रत्येक वस्तु अस्थायी तथा नाशवान है, यहां तक कि जगत की प्रक्रिया में शांकर मत से सर्वोच्च तत्व नित्य वही है।

जगत मिथ्या है, क्योकि जो कुच दृष्ट विषय है, उसे शांकर वेदान्त में मिथ्या कहा गया है। ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य किसी तत्व की सत्ता नहीं है। "नेति नेति" ने "हनानास्तिकिचन"[८] आदि महावाक्यों द्वारा इसकी पुष्टि होती है, किन्तु इससे यह नहीं समजना चाहिये कि शांकर वेदान्त का यह सिध्धांत माध्यमिको के शून्यवाद की तरह है। क्योकि माध्यमिक जगत को नेति-नेति ही कह सकते है, जबकि शांकर वेदान्त में "नेति नेति" का अधिष्ठान ब्रह्म है।[९]

काश्मीर शैव दर्शन में जगत का ख्याल

भारतीय दर्शन की प्रमुख तीन धाराएँ है, वैदिक, अवैदिक और आगमिक (तांत्रिक)। आगमिक परम्परा में आने वाले दर्शनों में काश्मीर शैव दर्शन (प्रत्यभिज्ञा दर्शन) तथा शैव सिध्धान्त की प्रमुख भूमिका है। ये दर्शन जगत को सृष्टि मानते हैं। तथा इनका सृजन, पालन और संहार तीनों ही प्रक्रियाएँ परमतत्त्व शिव से सम्पादित मानते हैं। शैवदर्शन के इतिहास पर दो दृष्टियों- ऐतिहासिक (अथवा पुरातत्त्व) तथा शास्त्रीय से विचार किया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर पता चलता है कि शैव धर्म अत्यन्त प्राचीन है, जितना कि सच्चिदानन्द स्वरूप परमशिव। इस दर्शन के आदि और अन्त का पता लगाना कठिन है, क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध शिव से हैं, जिसके स्वरूप का आदि और अन्त ब्रह्मा आदि देवता भी नहीं पा सके हैं। अतः अज्ञानग्रस्त मानव की वाणी की पहुंच से परे हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त लिंग और योनि के चिन्हों के आधार पर शैवधर्म का इतिहास पाँच हजार ई० पूर्व से अनुमानित किया गया है। शैवधर्म की प्राचीनता का संकेत वेदों से भी मिलता है। ऋग्वेद में शिवलिंग की उपासना का उल्लेख है।

काश्मीर शैव दर्शन के अनुसार जगत् का मूल चिदात्मयी अर्थात् सच्चिदानन्द, पूर्णाहन्तारूप, स्वात्मारूप, अद्वितीय और परिपूर्ण स्वातन्त्र्य रूप महेश्वर ही है अतः इस दर्शन के अनुसार एक पारमार्थिक सत्ता वाला महेश्वर ही अपनी अभिन्नरूपा स्वातन्त्र्य शक्ति की महिमा से स्वयं को आधार बनाकर किसी दूसरे साधन की अपेक्षा के बिना ही शिवादि से धारणी पर्यन्त

https://www.gapbhasha.org/

GAP भाषा
A MULTILINGUAL JOURNAL OF RESEARCH
(ISSN – 2582-8770)
Globally peer-reviewed and open access journal.

तत्त्वों तथा शिव से लेकर सकल प्रमाताओं पर्यन्त समस्त जड़-चेतन प्रमाता प्रमाणप्रमेय रूप विश्व प्रपञ्च को अभिव्यक्त करता है। वह अपने स्वातन्त्र्य के बल पर ही अपने परिपूर्ण रूप में अपूर्णता का आभास प्रकट करके आश्वमल अपृथक् होते हुए भी पृथकता का प्रकाशन करके मायीय मल और परिपूर्णकर्ता होते हुए भी सीमित कर्तृत्व के अभिमान एवं शुभाशुभ कर्म की वासना से युक्त होकर कार्यमल का प्रकाशन करता है। वह अपनी असीमित चित, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रिया शक्तियों में संकोच करके सीमित सामर्थ्य वाला बन जाता है। इस स्थिति में उसकी सर्वकर्तृत्व, सर्वज्ञत्व, पूर्णत्व, नित्यत्व और व्यापकत्व शक्तियाँ संकुचित होकर कला, विद्या, राग काल और नियति का रूप धारण कर लेती हैं। जिससे वह विश्व को अभिव्यक्त करने वाला, अर्थात् सृष्टि का रचयिता होते हुए भी अपने आपको जीव समझने लगता है।

इस प्रकार परमशिव या परमसत्ता या महेश्वर विश्वोत्तीर्ण भी है और विश्वमय भी है। अपने प्रकाश अथवा विश्वोत्तीर्ण रूप से वह समस्त प्रमाता प्रमाण और प्रमेय रूप विश्व प्रपञ्च को ऐकात्म्यभाव से अपने आन्तर में संजोये रखते हैं और विश्व-सिसृक्षा अर्थात् विश्वमय रूप में अपने स्वातन्त्र्य से इस अभेदरूप में स्थित अर्थसमूह को भेदरूप में प्रकाशित करते हैं। यह कार्य सम्पादन इनकी अपनी माया शक्ति से सम्पन्न होता है। इसके लिए इन्हें किसी बाह्य उपादान कारण की ज़रूरत नहीं पड़ती है। इनकी यह सवातन्त्र्य या माया शक्ति चिति, पराशक्ति या परवाक् नामों से जानी जाती है। इस अनुत्तर विमर्शमयी शिवभट्टारकाभिन्न परा भगवती के प्रसार से ही जगत् उन्मीलित एवं स्थित होता है और प्रसरण की निवृत्ति में संहार हो जाता है जैसे स्वच्छ दर्पण में चित्र-विचित्र नगर-ग्राम इत्यादि के प्रतिबिम्ब दर्पण से अभिन्न होते हुए भी, परस्पर और दर्पण से भिन्न भासित होते हैं, वैसे ही यह जगत् परमशिव के विमल संवित् से अभिन्न होते हुए भी, परस्पर और उस संवित् से भी भिन्न भासित होता है जैसे चित्र-विचित्र पदार्थ दर्पण के भीतर प्रकट होते हैं, वैसे ही परमसंवित् में जगत प्रकट होता है। इस प्रकार चिति (परमशिव की विमर्श शक्ति) ही नानाविध अनन्त वैचित्र्य सम्पन्न जगत् के रूप में उल्लासित होती हैं अर्थात् परमशिव ही विश्वोत्तीर्ण दशा में सम्पूर्ण सृष्टि को अपने भीतर सूक्ष्म रूप से समाहित रखता है, जिस प्रकार विशाल वट वृक्ष अपने बीज में सूक्ष्म रूप में समाहित रहता है, एवं विश्वमय दशा में वह परमशिव ही भिन्न-भिन्न रूपों अर्थात् पदार्थों में आभासित होने लगता है। अन्ततः काश्मीर शैव दर्शन के अनुसार जगत् का मूल एकमात्र परमशिव ही है। यही जगत् का उपादान तथा निमित्त कारण भी है।

सत्ता की सत्यता

काश्मीर शैव दर्शन के अनुसार विश्व में जो कुछ भी है, सब परमेश्वर या परमशिव ही है। अर्थात् परमार्थतत्त्व शिव है। एक मिट्टी के ढेले से लेकर जगत् में जितने भी पदार्थ विद्यमान हैं, उन सभी का अस्तित्व भी परमेश्वर के कारण ही है। जगत् परमार्थ रिक्त अभिव्यक्तिरहित नहीं है। उसमें भूत, भवत्, भविष्यत् सब बीज रूपेण विद्यमान है। यदि परमार्थ या महेश्वर में प्रकट होने की क्षमता न होती, तब उसे चित् या संवित नहीं कहा जा सकता था, ऐसी स्थिति में वह (परमशिव) जड़ पदार्थ के समान हो जाता।अर्थात् जगत् शिव की ही अभिव्यक्ति मात्र है। किन्तु मन जिसका मुख्य गुण विकल्प करना है, एक बाधक के रूप में काम करता है और अपने अन्तः स्थित परमार्थ स्वरूप का साक्षात्कार नहीं होने देता है। अर्थात् मन ही माया के वशीभूत होकर जगत् की सत्यता स्वीकार नहीं करता है तथा शिव एवं जगत् को भिन्न भिन्न मान बैठता है ।

शांकर वेदान्त एवम काश्मीर शैव दर्शन में तुलनात्मक समीक्षा

निगम प्रधान चिन्तन की चरम निष्पत्ति अद्वैत वेदान्त में हुई है। कुछ पाश्चात्य दार्शनिकों की दृष्टि में शांकर वेदान्त भारतीय दर्शन की पर्याय है। व्यापकता एवं गहराई की दृष्टि से भारतीय जनमानस को जितना शांकर वेदान्त ने प्रभावित किया उतना किसी अन्य दर्शन ने जनमानस को नही प्रभावित किया।

शांकर वेदान्त का परमतत्व ब्रह्म है, जो आप्तकाम, आत्माराम एवं परमनिष्काम है, वहीं पर काश्मीर शैव दर्शन का परमतत्व(शिव) भी आप्तकाम, आत्माराम एवं परमनिष्काम है। यदि शांकर वेदान्त का बल "सच्चिदानन्द" है तो काश्मीर शैव दर्शन का परमशिव भी "चिदानन्द" है। अर्थात् परमशिव भी सच्चिदानन्द है। "चिदानन्द" में काश्मीर शैव दर्शन में "सत्" शब्द ही का प्रयोग नही हुआ है किन्तु काश्मीर शैव दार्शनिक "सत्" शब्द को भी "चिदानन्द" में भी अभिप्रेत मानता है, किन्तु ब्रह्म जहा कूटस्थ नित्य है, वहीं परमशिव ज्ञानरूप है, क्रियारूप है। जहां ब्रह्म मात्र "प्रकाशरूप" है वहीं परमशिव "प्रकाशविमर्श" रूप अर्थात् ज्ञान क्रियारूप। ब्रह्म विज्ञानरूप है, शिव ज्ञान क्रियारूप है। शांकर वेदान्त में क्रिया अपूर्णता है, तो काश्मीर शैव दर्शन में पूर्णता है।

ब्रह्म चिन्मात्र है, जबकि परमशिव "पूर्णहंता" है ब्रह्म न एक है, न अनेक बल्कि अद्वैत है, जबकि परमशिव "एक-अनेक" है। ब्रह्ममात्र ब्रह्म है जबकि परमशिव "शिव-शक्ति" सामस्य है। शांकर वेदान्त ज्ञानमार्ग है, तो काश्मीर शैव दर्शन ज्ञानक्रिया सम्मुच्चय मार्ग । शांकर वेदान्त "जीवों ब्रह्ममैव नापरः का उदघोष करता है तो काश्मीर शैव दर्शन "जीव-शिवये वास्तवो न को पि भेदः का हिमायती है। "जीव" ब्रह्म है तो "पशु " शिव है।

जहां पर शांकर वेदान्त "मोक्ष" हेतु "साधनचतुष्टय" नित्या नित्य वस्तु विवेक, ईहामूत्रार्थ भोग-विराग, शमदयाती साधन संयत मुमुक्षुत्व पर बल देता है, वहीं पर का शैव दर्शन प्रत्यभिज्ञा हेतु उपाय चतुष्टय अनुपाय, शंभावोपाय, शक्तोपाय, आणमोपाय पर बल देता है। शांकर वेदान्त "ऋते ज्ञानान्नमुक्ति" पर बल देता है तो काश्मीर शैव दर्शन ज्ञानकर्म समुच्चय पर बल देता है। शांकर वेदान्त में ज्ञानोत्तर क्रिया सम्भव नहीं किन्तु काश्मीर शैव दर्शन में ज्ञानोत्तर भी क्रिया "ज्ञानी" का स्वरूप है।

यह समझा जाता है कि शांकर वेदान्त मात्र निषेध की विद्या है तो काश्मीर शैव दर्शन मात्र विधि की विद्या है। यह समझा जाता है कि शांकर वेदान्त में जगत को नकारा गया है तो काश्मीर शैव दर्शन में जगत शिव का विमर्श है, विभव है, प्रत्यभिज्ञा के बाद भी जगत परमशिव के विमर्श के रूप में रहता है।

उपसंहार

स्पष्ट है कि शांकर वेदान्त एवं काश्मीर शैव दर्शन दो बिल्कुल भिन्न दार्शनिक सिध्धांत नही। काश्मीर शैव दर्शन को शांकर वेदान्त का रूपांतरण कहना ही उचित नहीं है, क्योकि दोनों का उत्स भिन्न-भिन्न है और उनका विकास भी स्वतंत्र रूप से हुआ है, परन्तु काश्मीर शैव दर्शन पर शांकर वेदान्त के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। निगम के अनेकानेक मन्त्र आगमों में यथावत उद्धृत है। काश्मीर शैव दर्शन में वेदान्त के ही विचारो को आगम द्वारा पुष्ट करके विधि रूप में अद्वैत परक ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। विषय दोनों का एक ही है, वह है परमतत्व के स्वरूप का वर्णन ।

सचमुच दोनों का मणिकांचन योग शांकर वेदान्त का सोपाधिक ब्रह्म एवं काश्मीर शैव दर्शन का महेश्वर मूल रूप में औपनिषद् परमतत्व "महेश्वर" "मायातुप्रकृतिविद्यान्यायिनम् तु महेश्वर" को लक्ष्य करते है।

सन्दर्भ

[1] ब्र. सू. शां. भा., ३.२.२२
[2] ब्र. सू. शां. भा., ३.२.२२
[3] भारतीय दर्शन, भाग - २, पृ-५२९
[4] बृहदारण्यक उप., शां. भा. २.४.९
[5] शां. भा., २.१.१४

https://www.gapbhasha.org/

[6] शां. भा., २.४.
[7] शां. भा., तै. उप.
[8] कठ उप., २.१.११
[9] M. Hiriyanna, Outlines of Indian Philosophy, P-372

संदर्भ ग्रंथ सूचि

[1] अभिनवगुप्त, तन्त्रालोक भाग १-१२, कश्मीर संस्कृत ग्रन्थावली, श्रीनगर, १९१८-१९३८
[2] सोमानन्द, शिवदृस्टि, आर्यभूषण प्रेस, पूना, १९३४
[3] आगम, विज्ञान भैरव, रिसर्च डिपार्टमेन्ट ऑफ जे. एंडके.स्टेट १९१८
[4] अभिनवगुप्त, परमार्थसार, कश्मीर संस्कृत ग्रन्थावली,श्रीनगर, १९३१
[5] योगराज परमार्थसारविवृति, कश्मीर संस्कृत ग्रन्थावली, श्रीनगर, प्रथम आवृति, १९३१
[6] जयदेव सिंह, प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, द्वितीय आवृति,१९८३
[7] डॉ.बल्जिनाथ पण्डित शास्त्री, काश्मीर शैवदर्शन, श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ,जम्मू, १९७३
[8] डो. राधाकृष्णन् , भारतीय दर्शन, राजपाल पब्लिशिंग, दिल्ली, २०१४

https://www.gapbhasha.org/